Year-8; Sept. 2017
ISSN–2231-1130
UGC Sr. No. – 48398
VEETHIKA

बौद्ध धर्म के विकास में स्त्रियों का योगदान

डॉ0 वन्दना सन्त*

संक्षिप्तिका

छठी शताब्दी ईसा पूर्व जिन धर्मों का प्रादुर्भाव हुआ उनमें बौद्ध धर्म काफी तेजी से पुष्पित, पल्लवित हुआ और उसने थोड़े ही समय में न सिर्फ भारत वरन् भारत के बाहर भी अपनी उपस्थिति दर्ज करायी। बौद्ध धर्म के इतनी शीघ्र विकसित होने के कई कारण थे। धर्म को प्रचारित प्रसारित करने में बौद्ध संघ की भी महत्वपूर्ण भूमिका रही। बौद्ध धर्म के विकास में बौद्ध भिक्षुओं का तो अपूर्व योगदान रहा ही किन्तु भिक्षुणियों के प्रयासों एवं सहयोग को भी नजरअंदाज नहीं किया जा सकता। संघ की भिक्षुणियों ने भी धर्म के विकास में बढ़–चढ़ कर हिस्सा लिया। बौद्ध उपासिकाओं ने भी गृहस्थ धर्म के पालन के साथ बौद्ध धर्म के साथ न्याय करते हुए धर्म के विकास हेतु महत्वपूर्ण कार्य किए। वस्तुतः तत्कालीन विषम परिस्थितियों में स्त्रियों का संघ में सम्मिलित होना एवं धर्म प्रचारार्थ कार्य करना निश्चय ही सराहनीय था।

महत्वपूर्ण बिन्दु : महाप्रजापति गौतमी, यशोधरा, महिषी विशाखा, धम्मदिन्ना, संघमित्रा

वस्तुतः तत्कालीन सामाजिक ताने–बाने से निकलकर स्त्री का संघ में प्रवेश करने का निर्णय लेना एवं आजीवन भिक्षुणी बन कर संघ के नियमों के अनुरूप जीवन व्यतीत करना कठिन कार्य था जो अन्य स्त्रियों के लिए प्रेरणा स्रोत था। अन्य स्त्रियों ने इन भिक्षुणियों से प्रेरणा प्राप्त कर संघ में प्रवेश लिया एवं नियमबद्व रूप से सम्पूर्ण जीवन व्यतीत किया। संघ की भिक्षुणियों ने प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से धर्म के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी।

त्रिपिटक के निकाय ग्रन्थों में **थेरीगाथा** खुद्दक **निकाय** के **पन्द्रह ग्रन्थसमूहों में क्रम संख्या 9 पर** आता है।[1] भिक्षुणी संघ में ऐसी **तिहत्तर भिक्षुणियां** थीं जिन्हें अर्हत पद प्राप्त था। इनकी चर्चा थेरीगाथा नामक ग्रन्थ में की गयी है। इस ग्रन्थ में थेरियों (भिक्षुणियों) की गाथाओं में उनके कृतित्व एवं जीवन की चर्चा की है जिससे ज्ञात होता है कि किस प्रकार इन भिक्षुणियों ने धर्म प्रचारार्थ कार्य किए।

बौद्ध भिक्षुणियों में **महाप्रजापति गौतमी** अग्रगण्य हैं। संघ की स्थापना के पश्चात् संघ के विकास में ही उन्होंने अपना सम्पूर्ण जीवन अर्पित कर दिया। महाप्रजापति गौतमी ने आठ गुरू धर्मों को स्वीकार करके संघ में स्त्रियों के प्रवेश को सुनिश्चित कर दिया। उनके साथ ही शाक्य वंश की अन्य स्त्रियों ने प्रव्रज्या ग्रहण कर भिक्षुणी संघ में प्रवेश लिया।[2] इस प्रकार बौद्व भिक्षुणी संघ ने आकार लिया। जिसका श्रेय महाप्रजापति गौतमी को हैं। गौतमी इन भिक्षुणियों की प्रधान बनायी गयी।[3]

गौतमी की प्रबल इच्छा थी कि **वैशाली** में **आगार बनाया** जाए जिससे भिक्षुणियां बुद्व और उनके वरिष्ठ सदस्यों के समीप्य में रहकर ज्ञान लाभ प्राप्त कर सकें और उनके ज्ञान की बृहत्तर वृद्वि सम्भव हो सके। वह यह भी चाहती थीं कि बाद में **कपिलवस्तुमें भी आगार** स्थापित कराया जाए, जिससे कपिल वस्तु की स्त्रियां भी लाभान्वित हों एवं उनके ज्ञान की वृद्धि भी सम्भव हो सके।[4] उन्होनें इस विषय पर भी गहन विचार किया कि भिक्षुणियों के वस्त्र क्या होने चाहिए। उनका मानना था कि भिक्षुणियों के वस्त्रों से भी सौम्यता व सात्विकता झलकनी चाहिए। उन्होनें अपने विचारों से बुद्व को अवगत कराया। जिसे बुद्व ने सहर्ष स्वीकार कर लिया।[5]

निरन्तर ध्यान साधना मे लीन रहने एवं ज्ञान अर्जन में रत रहने के कारण महाप्रजापति गौतमी को धर्म का गूढ़ ज्ञान प्राप्त हो गया था। वे श्रावस्ती में भिक्षुणियों को शिक्षा प्रदान करती थीं।[6] वे एक **प्रमुख शिक्षिका** के रूप मे जानी जाती थीं। उन्होंने कई प्रमुख भिक्षुणियों को शिक्षा प्रदान की थी एवं प्रव्रजित भी किया था। थेरीगाथा से ज्ञात होता है कि भिक्षुणी **मुत्ता** ने गौतमी के निरीक्षण में ही विद्यार्थिनी (शिक्षमाणा) का जीवन बिताया था[7]। महाप्रजापति गौतमी महान एवं प्रभावी उपदेशिका के

*एसोसिएट प्रोफेसर, प्राचीन भारतीय इतिहास एवं पुरातत्व, नारी शिक्षा निकेतन पी0जी0 कॉलेज, लखनऊ

रूप में विख्यात थीं। कई स्त्रियों ने उनके उपदेशों को सुनकर उनसे धम्म प्रेरणा प्राप्त की थी। भिक्षुणी **पुण्णा** ने गौतमी के उपदेश से प्रेरित होकर गृह–त्याग दिया था[8]। **भद्रा–कापिलानी** ने भी गौतमी का उपदेश श्रवण किया जिससे वह अत्यंत प्रभावित हुयी[9]।

शिक्षा प्रदान करने के कार्य में गौतमी अन्य विदुषी भिक्षुणियों की सहायता भी लेती थीं। इन प्रमुख उपदेशिकाओं में बिम्बिसार की पूर्व पत्नी रानी **खेमा,भद्राकापिलानी** एवं **धम्मदिन्ना** आदि थीं[10]। गौतमी ने कई स्त्रियों को धर्म की दीक्षा भी दी थी। **मित्ता**[11], **दन्तिका**[12] नामक भिक्षुणियों ने गौतमी से ही प्रव्रज्या प्राप्त की थी।

इस प्रकार गौतमी ने अपना सम्पूर्ण जीवन बौद्ध धर्म के विकास में लगा दिया। वयोवृद्धता के कारण गौतमी ने नयी भिक्षुणियों पर अधिक से अधिक ध्यान दिया ताकि वे उनका कार्यभार सुगमतापूर्वक संभाल सकें। इनमें **यशोधरा, सैला, विमला, सोमा, नादुत्तरा** प्रमुख हैं[13]। उनको पूर्ण विश्वास था कि **''बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय''** के लिए ही उनका जन्म हुआ है। उनकी गाथा में उल्लिखित है–

हे बुद्ध! हे वीर! हे सर्वोत्तम प्राणी! तुम्हें नमस्कार। जिसने मुझे और अन्य बहुत से प्राणियों को दुःख से मुक्त किया है[14]। इस प्रकार महाप्रजापति गौतमी को भिक्षुणी संघ की नेत्री कहा जा सकता है, जिन्होंने बौद्ध धर्म के विकास में अभूतपूर्व योगदान दिया।

महाप्रजापति गौतमी की ही भांति संघ की अन्य भिक्षुणियों ने भी बौद्ध धर्म के प्रचार–प्रसार हेतु महत्वपूर्ण कार्य किए। यशोधरा जैसी रानी का, संसार के समस्त सुख–वैभव त्यागकर, पति की अनुगामिनी बन त्रिरत्न की शरण में जाना निश्चय ही अन्य स्त्रियों के लिए प्रेरणादायी था। यशोधरा (गोपा) ने अपना सम्पूर्ण जीवन धर्म की साधना में लगा दिया। थेरी होने के पश्चात् यशोधरा भिक्षुणी संघ में **भद्रा कात्यायनी** के नाम से विख्यात हुयी[15]।

थेरीगाथा एवं अन्य ग्रन्थों से ज्ञात होता है कि मगधनरेश बिम्बिसार की पत्नी **खेमा** अत्यंत धर्मपरायण थी। वह विदुषी स्त्री थी एवं बौद्ध धर्म में उसकी विशेष आस्था थी। एक स्थान पर विवरण प्राप्त होता है कि एक बार भिक्षुणी खेमा प्रसेनजित के समक्ष एक शिक्षिका की भांति बैठी थी। प्रसेनजित के हृदय में धर्म के कुछ गूढ़ विषयों को लेकर संशय था। उन्होंने खेमा से इन प्रश्नों को पूछा। खेमा ने बौद्धधर्म से सम्बन्धित कई अनसुलझे प्रश्नों के संतोषजनक उत्तर दिए। जब उन्हीं प्रश्नों को प्रसेनजित ने धर्मदक्ष भिक्षु से पूछा तो वह यह सुनकर आश्चर्यचकित हो गए कि खेमा द्वारा दिए उत्तर भिक्षु के दिए उत्तरों से मेल खाते थे[16]। खेमा ने अपना सम्पूर्ण जीवन धर्म के विकास में लगा दिया। थेरीगाथा से ज्ञातव्य है कि भिक्षुणी **विजया** खेमा की प्रिय सहचरी थी। विजया ने खेमा से धम्मोपदेश प्राप्त कर बौद्ध धर्म की शरण ली[17]।

भिक्षुणी **धम्मदिन्ना** की गणना महान **उपदेशिका** के रूप में की जाती है। वह बुद्ध की धर्म प्रचारक शिष्याओं में अग्रणी मानी जाती है[18]। धम्मदिन्ना को **प्रथम भिक्षुणी उपदेशिका** कहा गया है। पति के बौद्ध धर्म के प्रति आकृष्ट होने के पश्चात् धम्मदिन्ना ने भी सांसारिक जीवन के प्रति उदासीनता महसूस की एवं अपने पति से अनुमति लेकर प्रव्रजित हुयी[19]। भिक्षुणी बनने के पश्चात् उसने अपना सम्पूर्ण जीवन धर्म साधना में व्यतीत किया। उसे धर्म के गूढ़ विषयों का ज्ञान था। परम साधिका थेरी धम्मदिन्ना ने धर्मकथाओं द्वारा सुन्दर उपदेश दिया और सांसारिक जीवन से दुःखी बहुत सी स्त्रियों को त्रिरत्न की शरण में लाकर शांति प्रदान की। थोरीगाथा से ज्ञात होता है कि भिक्षुणी **सुक्का** धम्मदिन्ना का उपदेश सुनकर अत्यंत प्रभावित हुयी एवं उसने प्रव्रज्या ग्रहण कर ली[20]। इसी प्रकार भिक्षुणी **वड्ठेसी** ने भी जब धम्मदिन्ना का उपदेश सुना तब कई स्त्रियां उसकी शिष्या हो गयी, जिन्होंने बाद में शास्ता के धर्म को आत्मसात कर लिया।[21]

अपनी साधना बेला में धम्मदिन्ना ने स्वयं ही कहा था– जो अंतःकरण की सम्पूर्ण वृत्तियों में परमशान्ति की इच्छा करता हैं और भोग तृष्णा के आकर्षण में नहीं फंसता वही संसार रूपी स्रोत के ऊपर जाने वाला कहलाता है[22]। ज्ञात होता है कि धम्मदिन्ना श्रावस्ती में भिक्षुणियों के विद्यालय में

विख्यात अध्यापिका थी। वह प्रायः धर्मप्रवचन दिया करती थीं[23]।

इसी प्रकार **थुल्लनन्दा** के विषय में भी उल्लेख मिलता है वह भी प्रमुख उपदेशिका के रूप में जानी जाती थी। कोशल नरेश प्रसेनजित ने भी उसके व्याख्यानों एवं उपदेशों को सुना था एवं वह उसके व्याख्यानों से अत्यंत प्रभावित भी थे। विनयपिटक में थुल्लनन्दा की काफी प्रशंसा की गयी है। तीन बार कहा गया है कि वह धम्म की क्षेष्ठ शिक्षक है। दो–तीन बार कहा गया है कि वह कविता का पाठ करने में प्रसिद्ध है[24]।

भद्रा कापिलानी भी संघ की प्रमुख भिक्षुणी थी। उसका विवाह महातित्थ (महातीर्थ) गांव के निवासी पिप्पली नामक माणवक (महाकश्यप) के साथ हुआ था[25]। दोनों ही पवित्र जीवन के साधक थे। दोनों ने ही घर से निकलकर एक दूसरे से बात कर साथ–साथ प्रव्रज्या ग्रहण कर ली। बाद में भद्रा कापिलानी ने गौतमी से उपदेश ग्रहण कर अर्हत्व प्राप्त किया[26]। भद्रा कापिलानी को भी प्रतिष्ठा प्राप्त व अत्यंत **प्रभावशाली उपदेशिका** माना गया है। धम्मदिन्ना की भांति भद्रा कापिलानी को भी जगह–जगह उपदेश हेतु बुलाया जाता था[27]।

भद्रा कापिलानी की ही भांति **भद्रा कुण्डलकेशा** भी अत्यंत विदुषी भिक्षुणी थी। अपने सांसारिक जीवन से दुःखी होकर पहले वह निग्रन्थ साधुओं के आश्रम में गयी और उनसे प्रव्रज्या की याचना की। वहां ताड़ की कंघी से उसके केशों का लुंचन किया गया, जिससे उसके बाल कुण्डल के आकार के घुंघराले हो गए। इसलिए उसका नाम कुण्डलकेशा पड़ गया[28]। उसने तर्कशास्त्र का गहन अध्ययन किया। शीर्घ ही वह भाषणपटु और तर्ककुशल हो गयी। वह शास्त्रार्थ करने में अत्यंत दक्ष थी। एक बार श्रावस्ती में धम्म सेनापति **सारिपुत्त** को उसने वाद मे चुनौती दी। सारिपुत्त ने उसके सभी प्रश्नों का संतोषजनक उत्तर दिया। अन्त में सारिपुत्त ने उससे सिर्फ एक प्रश्न पूछा, एक वस्तु क्या है? (एक नाम कि?) भद्रा कुछ उत्तर न दे सकी अतः उसने हार स्वीकार कर ली और कहा कि वह उनकी शरण लेती है[29]। बाद में बुद्ध को सुन वह उसी क्षण अर्हत हो गयी।

प्रव्रज्या ग्रहण करने के पश्चात् विदुषी भिक्षुणी भद्रा कुण्डलकेशा ने अपना सम्पूर्ण जीवन धर्म के प्रचार–प्रसार में लगा दिया। विभिन्न राज्यों का भ्रमण कर धम्मोपदेश करना ही उसका प्रमुख कार्य था। वह अपनी गाथा में कहती है–

तब से लेकर मैं लगातार पचास वर्ष तक अंग, मगध, वज्जि, काशी, और कोसल जनपदों में घूमती रही हूँ। इतने समय तक कर्ज (उपकार) मुक्त (अर्हत) होकर ही मैंने राष्ट्र का अन्न खाया है[30]।

इसी प्रकार उपदेशिका एवं शिक्षिका के रूप में **सुक्का** को स्मरण किया जाता है। वह अत्यंत शालीन भिक्षुणी थी। उसके विषय में कहा जाता है कि वह प्रायः सभ्य, शालीन लोगों के बीच में बैठकर धर्म के सिद्धान्तों की सुन्दर व सरल व्याख्या बुद्धिमत्तापूर्ण करती थी[31]। लोग अत्यंत प्रभावित होकर उसकी बातें ध्यानर्पूक सुना करते थे, जिससे जनसाधारण तक धर्म सुगमतापूर्वक पहुंच जाता था। ऐसा विवरण प्राप्त होता है कि एक दिन उसने राजग्रह के भिक्षुणी निवास में अत्यंत प्रभावशाली धम्मोपदेश दिया जिसे सुनकर श्रोता मन्त्रमुग्ध हो गए। उपदेश के समाप्त हो जाने के पश्चात् एक व्यक्ति ने राजग्रह में आकर सुक्का के धम्मोपदेश की महत्ता का वर्णन करते हुए नागरिकों को उद्‌बोधित किया– ''अरे! सुक्का की मृदुल, ओजपूर्ण, वाणी रूपी जीवनी सुधा को एक बार प्राप्त करने पर वह फिर कभी नष्ट नहीं होती। ज्ञानी जन वाणी को उसी प्रकार पान करते हैं, जैसे पथिकगण वर्षा के जल को[32]।

भिक्षुणी **पटाचारा** की गणना भी **श्रेष्ठ उपदेशिका** के रूप में की जाती थी[33]। पटाचारा ने भी सांसारिक दुःखों से व्यथित होकर त्रिरत्न की शरण ली थी। धर्म की शरण में आकर उसके अशांत ह्रदय को असीम शान्ति प्राप्त हुयी। प्रव्रजित होने के पश्चात् उसने अपना सम्पूर्ण ध्यान धम्म साधना में लगा दिया एवं धर्म के कई गूढ़ विषयों का अध्ययन किया। फलतः उसके ज्ञान में उत्तरोत्तर वृद्धि होती गयी और उसकी गणना प्रमुख उपदेशिका के रूप में की जाने लगी। थेरीगाथा से ज्ञात होता है कि पटाचारा नें कई नयी भिक्षुणियों

को बौद्ध धर्म में दीक्षा दी थी। एक स्थान पर भिक्षुणी पटाचारा की **तीस शिष्या भिक्षुणियों** का उल्लेख प्राप्त होता है[34]। ये विभिन्न सामान्य व असामान्य कुलों से है। भिक्षुणी पटाचारा के उपदेशों का श्रवण कर ये सभी पुरूषार्थ में लग गयीं और उन्होंने शीघ्र ही ज्ञान प्राप्त कर लिया। थेरीगाथा में ही एक अन्य स्थान पर पटाचारा की **पांच सौ भिक्षुणी शिष्याओं** का उल्लेख है[35]। पटाचारा की शिष्या होने के कारण इन्हें सामूहिक रूप से '**पंचसता पटाचारा**' अर्थात् पांच सौ पटाचाराएं कह कर सम्बोधित किया गया है।

भिक्षुणी उत्तमा ने पटाचारा के उपदेश से ही प्रव्रज्या ग्रहण की और तत्पश्चात उत्तमा साधना में लीन हो गयी एवं परम ज्ञान का साक्षात्कार किया।[36] पटाचारा की एक अन्य शिष्या भिक्षुणी पटाचारा के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करती है[37]। भिक्षुणियों के विनय नियमों का भली भांति पालन करने के कारण भगवान बुद्ध ने कहा था, विनय धारण करने वालों में पटाचारा अग्र है।[38]

बौद्ध साहित्य में एक भिक्षुणी की कथा मिलती है जिसका नाम **कजंगला** है। यह भिक्षुणी अपने आस–पास के लोगों को बौद्ध धर्म के सिद्धान्तों के उदाहरण देकर व्याख्या किया करती थी[39], जिससे जनसाधारण धर्म की सूक्ष्म बातों को सहजता से समझ पाने में सक्षम हो जाता था एवं आसानी से उसे आत्मसात कर लेता था।

संघ एवं बौद्ध धर्म के विकास में भिक्षुणी **आम्रपाली** का भी महत्वपूर्ण योगदान था। अन्यत्र हमने देखा कि वैशाली की नगरवधु आम्रपाली का जीवन वैभवमयी एवं सुख सुविधापूर्ण था। किन्तु वह अपने गणिका के जीवन से संतुष्ट नहीं थी। एक बार जब भगवान बुद्ध वैशाली आए तो आम्रपाली उनके समीप गयी और उसने तथागत से निवेदन किया '' भन्ते! भिक्खुसंघ के साथ भगवान् मेरा कल का भोजन स्वीकार करें।'' भगवान ने आम्रपाली का निमन्त्रण मौन होकर स्वीकार कर लिया। ठीक उसी दिन उसी समय वैशाली के लिच्छवि कुमारों ने वहां प्रवेश किया। वे भी भगवान को अगले दिन के भोजन पर आमंत्रित करना चाहते थे। उन्होंने आम्रपाली से कहा, ''जे आम्रपाली! सौ हजार ले लो और इन भात (भोजन) को हमें दे दो।'' किन्तु आम्रपाली ने उत्तर दिया, ''आर्य पुत्रों! यदि तुम पूरे वैशाली गणराज्य को भी दोगे तो भी मैं इस महान भात (भोजन) को नहीं दूंगी[40]।''अगले दिन भगवान् बुद्ध ने अपने भिक्षु शिष्यों के साथ आम्रपाली के निवास स्थान पर भोजन किया। भोजन करने के उपरांत आम्रपाली ने तथागत से निवेदन किया कि वह अपना उद्यान (आम्रवन) बुद्ध प्रमुख भिक्षु संघ को दान देना चाहती है। बौद्ध धर्म के प्रति श्रद्धा देखकर बुद्ध ने आम्रपाली के प्रस्ताव को सहर्ष स्वीकार कर लिया[41]। इसके पश्चात् बुद्ध ने उसे धम्मोपदेश दिया, जिसे सुनकर उसके हृदय में सद्धर्म का अंकुर विकसित हुआ। जीवन के अन्तिम दिनों में उसने प्रव्रज्या ग्रहण की एवं भिक्षुणी संघ में सम्मिलित हो गयी[42]। न सिर्फ आम्रपाली अपितु बौद्ध काल की कुछ प्रमुख गणिकाओं ने परमशांति की प्राप्ति में शास्ता के बताए मार्ग का अनुसरण किया। इनमें **विमला[43], सिरिमा[44], अर्द्धकाशी[45], वासवदत्ता[46]** विशेष हैं। इन गणिकाओं ने त्रिरत्न की शरण में आकर अनुपम उदाहरण प्रस्तुत किए।

इसी प्रकार **रवुज्जुत्तरा** एवं **पुण्णिका[47]** नामक दासियों द्वारा तथा **प्रकृति** नामक चाण्डाल कन्या[48] द्वारा धर्म को आत्मसात करना भी अत्यंत महत्वपूर्ण था।

थेरीगाथा से ज्ञात होता है कि **चाला,उपचाला** एवं **सीसूपचाला** धम्म सेनापति सारिपुत्त की बहने थीं। तीनों बहनों को बुद्धवचन पालि तिपिटक में बड़ा स्थान मिला है। इन्होंने व्यवस्थावाद के विरूद्ध क्रांतिकारिणी के रूप में खूब प्रसिद्धि पायी[49]। तीनों बहनों ने धम्म के विकास में योगदान दिया।

भिक्षुणी की भांति गृहस्थ उपासिकाओं ने भी धर्म के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया। इनके प्रयास भी सराहनीय रहें। गृहस्थ उपासिकाओं में **महिषी विशाखा** का नाम **सर्वोपरि** है। विशाखा ने संघ एवं जनसाधारण के मध्य एक महान रिश्ता स्थापित किया। धर्म के प्रति उसकी उत्कट निष्ठा की पराकाष्ठा एवं संघ की उन्नति की उत्कट अभिलाषा प्रदर्शित होती है। उसके द्वारा संघ को दिए गए दानों एवं उपहारों में उसकी धम्म के प्रति

श्रद्धा प्रकट होती है। संघ एवं साधारण जन के मध्य अत्यंत सुदृढ़ एवं आत्मीय सम्बन्ध स्थापित कर महिषी विशाखा ने एक आदर्श उपस्थित किया। धम्मपद टीका, विनयपिटक के विवरणों एवं अंगुत्तर–निकाय में वर्णित गौतम व विशाखा के मध्य संवादों से उसके व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर प्रकाश पड़ता है[50]।

ज्ञातव्य है कि विशाखा[51] के नाना मेण्डक बिम्बिसार के राज्य में एक अत्यंत धनी श्रेष्ठि थे। उसके पिता धनंजय की गणना भी महान उद्यमियों में की जाती थी। उसकी माता सुमना गुणवान स्त्री थी। सोलह वर्ष की उम्र में ही उसने गौतम के उपदेश को सुना और बौद्ध धर्म के प्रति आकृष्ट हो गयी। महाप्रजापति गौतमी से उसने धम्मोपदेश प्राप्त किया। तरूणी होने पर उसका विवाह श्रावस्ती के महाश्रेष्ठी मिगार के पुत्र पूर्णवर्धन से हुआ। बचपन से ही उसकी महाकारूणिक भगवान तथागत के प्रति श्रद्धा थी। उसकी धर्मनिष्ठा एवं श्रद्धा के कारण ही मिगार एवं उसके पुत्र का झुकाव बौद्ध धर्म के प्रति हुआ। ज्ञान में प्रखर होने के कारण उसके श्वसुर मिगार ने विशाखा को पुत्रवधु होने के बावजूद भी अपनी माता स्वीकार कर लिया। इसीलिए वह **मिगार माता** के नाम से भी प्रसिद्ध हो गयी[52]।

बौद्ध साहित्य में एक अत्यंत रोचक घटना प्राप्त होती है[53]। श्रावस्ती में सुदत्त (अनाथपिण्डक) द्वारा बनवाया गया भव्य जेतवन महाविहार था। एक बार जब बुद्ध धम्मोपदेश दे रहे थे तो महिषी विशाखा भी बहुमूल्य आभूषण पहनकर वहां आयी। उसने अपने समस्त आभूषण उतार कर गठरी में बांधकर अपने पास रख लिए और धम्म चर्चा में लीन हो गयी। धम्म देशना के पश्चात् वह वापस अपने घर आ गयी एवं आभूषण वहीं भूल गयी। भिक्षु आनंद द्वारा इसकी सूचना दिए जाने के बाद भी, विशाखा ने उन आभूषणों को लेने से मना कर दिया। विशाखा ने इसे भिक्खु संघ के प्रति दान मान लिया। भिक्षु आनंद संघ के विनयनियमों से परिचित थे। वे भलीभांति जानते थे कि संघ को सोना–चांदी लेना निषेध है। अतः वे इस समस्या के समाधान हेतु बुद्ध के पास पहुंचे। भगवान् बुद्ध ने कहा, ''सोना–चांदी भिक्खु संघ नहीं रख सकता है। अतः इन गहनों की कीमत स्वर्णकार से पूछी जाए और उतने मूल्य की कोई भूमि खरीदकर एक बुद्धविहार का निर्माण करके भिक्खु–संघ को दान में दिया जा सकता है।''

नगर के स्वर्णकार ने इन बहुमूल्य आभूषणों की कीमत नौ करोड़ बतायी। मिगारमाता विशाखा ने इन आभूषणों को स्वयं खरीद लिया। वह इनसे एक भव्य महाविहार का निर्माण करवाना चाहती थी। एक अन्य स्थान पर उल्लेख प्राप्त होता है कि दानशीला विशाखा ने गौतम से पूछा कि उसे संघ को क्या देना चाहिए। गौतम ने कहा– पूर्वमें एक विशाल स्थान जहां भिक्षुओं का जनसमूह एकत्र हो सके[54]। गौतम से संकेत प्राप्त कर विशाखा ने अत्यंत प्रसन्नता पूर्वक **महामौद्‌गलायन** की मदद से **श्रावस्ती के पूर्व में एक विशाल विहार** बनवाया[55]। यह विहार एक अत्यंत भव्य महाविहार था जिसके निर्माण में सत्ताईस करोड़ रूपये व्यय हुए एवं तेरह माह लगे[56]। यह नगर के पूर्व में शान्त वातावरण में निर्मित कराया गया[57], मान्य सारिपुत्त के झुकाव पर इसका नाम **पूर्वाराम (पुब्बाराम)** महाविहार रखा गया और मध्य में बने कक्ष का नाम 'विशाखा–कक्ष' रखा गया[58], कालांतर में विशाखा कक्ष में **दो** महत्वपूर्ण निर्णय लिए गए[59]। **पहला** यह था कि आनंद बुद्ध के स्थायी सहायक होंगे और **दूसरा** यह कि बुद्ध प्रतिवर्ष वर्षा प्रवास करने श्रावस्ती लौट आया करेंगे। **श्रावस्ती के जेतवन एवं पूर्वाराम महाविहार में भगवान बुद्ध ने सर्वाधिक वर्षावास किए[60]।**

महिषी विशाखा एवं उनकी मित्र **उपासिका सुप्रिया** प्रायः विहार आया करती थीं। वे भिक्षुओं को उनकी आवश्यकतानुसार दवाईयाँ, चीवर और तौलिए दिया करती थीं[61]। विशाखा ने महाप्रजापति गौतमी को भी गंगा के दक्षिण तट पर धम्मकक्ष बनवाने में सहायता देने का वचन दिया था[62]।

श्रावस्ती में होने वाली धम्म देशनाओं में भी विशाखा भिक्षुणियों को सहायता देती थीं[63]। प्रायः श्रावस्ती में आने वाली भिक्षुणियों को राजमहल के उद्यान में रहना पड़ता था। तीसरे वर्ष रानी मल्लिका एवं विशाखा के सहयोग से भिक्षुणियों के लिए पृथक विहार बनवा दिया गया[64],

एक बार मान्य सारिपुत्त के सुझाव पर गौतम ने वर्षा प्रवास की अवधि को बढ़ा दिया। इसमें कई श्रद्धालु व्यक्ति एकत्रित हुए। महिषी विशाखा ने उपासिका रानी मल्लिका एवं उपासक संरक्षक सुदत्त की सहायता से तीन हजार भिक्षु भिक्षुणियों के निवास करने एवं भोजन की व्यवस्था की[65]।

बौद्ध ग्रन्थों से ज्ञात होता है कि विशाखा अत्यंत उदार एवं दानशीला थी। ऐसा कहा जाता है कि दो हजार भिक्षु प्रतिदिन श्रावस्ती में अनाथपिण्डक के गृह से दिन का भोजन प्राप्त करते थे और इसी प्रकार प्रतिष्ठा प्राप्त भिक्षुणियां विशाखा के गृह से[66]। ''धम्मपद टीका में एक स्थान पर इसी प्रकार का विवरण प्राप्त होता है कि प्रतिदिन दो हजार भिक्षु अनाथपिण्डक के घर से भोजन, दवाई प्राप्त करते थे.............और इतनी ही संख्या में विशाखा एवं सुप्रवासा के घर से[67]।

एक बार गौतम श्रावस्ती में ठहरे थे। तब विशाखा उनके विहार पर गयी और उन्हें अपने यहां भोजन का निमंत्रण दिया जिसे भगवान् ने स्वीकार कर लिया। अगले दिन भोजनोपरान्त विशाखा एक नीचे आसन पर बैठी और भगवान् बुद्ध से उसने ये आठ वर मांगे–

(1) मैं यावत् जीवन संघ को चीवर (वस्त्र) देना चाहती हूँ।
(2) श्रावस्ती में आने वाले सभी भिक्खुओं को भोजन देना चाहती हूँ।
(3) श्रावस्ती से प्रस्थान करने वाले (गामिक) सभी भिक्खुओं को भोजन देना चाहती हूँ।
(4) रोगग्रस्त भिक्खुओं को भोजन देना चाहती हूँ।
(5) रोगग्रस्त भिक्खुओं की सेवा करने वाले परिचारकों को भोजन देना चाहती हूँ।
(6) रोगी भिक्खुओं को औषधि देना चाहती हूँ।
(7) भिक्खु संघ को रोज सवेरे यवागू (पतली खिचड़ी) देना चाहती हूँ।
(8) भिक्खुणी संघ को नहाने के समय पहनने के लिए उदकसाड़ी (वस्त्र) देना चाहती हूँ[68]।

जब भगवान् ने विशाखा से इन वरों का कारण पूछा तो उसने कहा कि भगवान् धम्म सेवा से सबको पुण्य संचय होता है[69]। अतः उससे प्रसन्न होकर गौतम ने उसके समस्त आठ वरों को स्वीकार कर लिया।

भगवान् बुद्ध ने विशाखा के विषय में कहा था – ''भिक्खुओं, पांच वृद्धियों से बढ़ती हुयी आर्यश्राविका खूब बढ़ती है, प्रसन्न और स्वस्थ रहती है। किन पांच से? श्रद्धा से, शील से, विद्या से, त्याग से और प्रज्ञा से। ये सभी गुण महिषी विशाखा के पास हैं[70]।'' टीका में उल्लिखित है– संसार में कोई भी स्त्री उसकी तरह उदार नहीं थी, जो एक नास्तिक के घर में निवास करती थी[71]।भगवान बुद्ध ने दानी उपासिकाओं के सम्बन्ध में भिक्खुसंघ से कहा था– ''दायिकाओं में विशाखा मिगारमाता अग्र है''[72]।

विशाखा के कार्यों में उसकी सहायता करने वाली कोसल नरेश प्रसेनजित की भार्या रानी **मल्लिका** थी। रानी मल्लिका गौतम की अनन्य उपासिका थी। राजा प्रसेनजित का मन भगवान् की तरफ आकर्षित करने में इनकी प्रमुख भूमिका थी[73]। ऐसा विवरण प्राप्त होता है कि रानी मल्लिका के प्रयासों से ही प्रसेनजित पशु हत्या के दुष्फल से बच गए एवं धीरे–धीरे भगवान् बुद्ध के प्रति उनकी श्रद्धा बढ़ने लगी[74]। मल्लिका राजमहल में रहकर ही चिन्तन मनन करती थी। तथागत ने भिक्षु संघ में कहा अन्तदर्शी साधिकाओं में रानी मल्लिका अग्र है[75]। प्रायः श्रावस्ती में होने वाली धम्म–देशनाओं में रानी मल्लिका भिक्षुणियों की पूर्ण हृदय से सहायता करती थी[76]।

रानी मल्लिका की भांति **सुप्रिया** भी महोपासिका विशाखा के धार्मिक कार्यों में सहायता प्रदान करती थी। इन्होंने सारनाथ के मृगदाव में अनेक सुन्दर विहार बनवाए थे[77]। सुप्रिया नित्यप्रति ही विहार जाती थीं एवं धर्म श्रवण कर परम शांति का अनुभव करती थी। दान देना एवं सेवा करना उसके जीवन के प्रमुख कार्य थे। वह भिक्षुओं को आवश्यकतानुसार दवाइयां, चीवर और तौलिए वितरित किया करती थी।

सुप्रिया भिक्षुओं की सेवा सुश्रुषा में सदैव तत्पर रहती थी। एक दिन वह एक विहार में गयी जहां उसने एक रोगी भिक्षु को देखा और पूछा कि

रोग को ठीक करने हेतु उसे किस चीज की आवश्यकता है। भिक्षु ने कहा कि उसे रस (पके हुए मांस का रस) चाहिए। अतः रोगी भिक्षु को रस देने का वचन देकर वह वापस आ गयी। दूसरे दिन उसने अपनी दासी को कुछ मुद्राएं देकर मांस लाने भेजा। किन्तु उस दिन सारे हिंसाग्रह बन्द थे। अतः दासी मांस न ला सकी। यह जानकर सुप्रिया काफी चिंतित हो गयी क्योंकि वह रूग्ण भिक्षु को वचन दे चुकी थी। अतः उसने तेज कटार से अपनी सुकोमल जांघ के मांस को काटकर दासी को दिया और कहा वह उस मांस को भलीभांति पकाकर रस तैयार कर ले एवं रोगी भिक्षु को दे आए[78]।

बौद्धसाहित्य से **खुज्जुत्तरा**[79]नामक एक उपासिका के विषय में ज्ञात होता है। यह कौशाम्बीनरेश उदयन की पटरानी श्यामावती की सेवा में रहती थी। बुद्ध के उपदेशों को सुन वह अत्यंत प्रभावित हुयी। ऐसा विवरण प्राप्त होता है कि वह प्रतिदिन घोषिताराम महाविहार जाती थी और भगवान् के मुख से अमृतवाणी सुन कर आती और श्यामावती और अन्य राजमहिलाओं के सामने उसे दुहरा देती थी[80]। तथागत ने उसके बारे में कहा था। बहुश्रुताओं में खुज्जुत्तरा अग्र है[81]।

कुशीनगर के मल्ल राजा की पुत्री **वीरांगना मल्लिका** की गणना भी महत्वपूर्ण उपासिका के रूप में की जाती है। इसका विवाह बंधुल मल्ल के साथ हुआ था, जो कि प्रसेनजित का सेनापति था। सेनापति को पुत्र सहित धोखे से मारे जाने की खबर सुनकर यह तनिक भी विचलित नहीं हुयी। उस समय मल्लिका 500 भिक्षुओं को भोजन करा रही थी[82]। भगवान् के महापरिनिर्वाण के पश्चात् मल्लिका ने महालता आभूषण, जो नौ करोड़ मूल्य का था, भगवान् के स्थूल शरीर पर अर्पण कर दिया था[83]। इस प्रकार मल्लिका दानी स्वभाव की वीर स्त्री थी। अन्य उपासिकाएं जिन्होंने संघ एवं धर्म के विकास में महत्वूर्ण योगदान दिया उनमें **सुजाता,कात्यायनी, नकुलमाता** प्रमुख हैं।

बुद्ध के समय में बौद्ध धर्म काफी तेजी से पुष्पित, पल्लवित हुआ। उसके पश्चात मौर्य–काल बौद्ध धर्म के विकास की दृष्टि से सर्वाधिक महत्वपूर्ण काल माना गया। इस समय भारत में नहीं अपितु भारत के बाहर भी धर्म का प्रकाश आलोकित हुआ। इसका श्रेय मौर्य सम्राट अशोक को जाता है। वह स्वयं बौद्ध–धर्म का महान उपासक था। उसके प्रयासों से ही बौद्ध धर्म भारतीय सीमाओं का अतिक्रमण करके विदेश में जा पहुंचा। सम्राट अशोक ने बौद्ध धर्म के प्रचार हेतु भिक्षु भिक्षुणियों को श्री लंका, मध्य एशिया एवं दक्षिण पूर्व एशिया के देशों में भेजा[84]। सिंहली परम्परानुसार **सम्राट अशोक** (273–236 ई0पू0) ने धर्म प्रचारकों को सर्वत्र भेजा। सम्राट अशोक ने अपने पुत्र **महेन्द्र** को चार और व्यक्तियों के साथ श्रीलंका भेजा और वहां उन्होंने बौद्ध धर्म के सिद्धान्त सिंहली राजा **देवानांपिय तिस्स** (247–207ईसा पूर्व) और उनके अनुचरों को सुनाए। श्रीलंका के राजा के साथ उनकी रानी व जनता सभी धर्म से अत्यंत प्रभावित हुए[85]। तब सिंहल की स्त्रियों ने भी त्यागमय पावन–पथ को अपनाने की आकांक्षा प्रकट की। **रानी अनुला** सहित अन्य कई स्त्रियों ने भी धर्म के प्रति अपनी श्रद्धा प्रकट करते हुए प्रव्रज्या ग्रहण करने की इच्छा प्रकट की। बौद्ध धर्म में दीक्षित करने के लिए अशोक ने अपनी पुत्री पुण्यमयी **थेरी संघमित्रा** को सिंहल भेज दिया।

संघमित्रा ने बोधिवृक्ष की शाखा को साथ लिया और सिंहल प्रस्थान किया[86]। श्रीलंका द्वीप में सम्राट अशोक की पुत्री संघमित्रा एवं पुत्र महेन्द्र के महान त्याग से जो बोधिवृक्ष की शाखा रोपी गयी थी, वह आज बहुत बड़े वृक्ष के रूप में पल्लवित होकर अक्षुण्ण बनी हुयी है[87]। आज श्रीलंका में अस्सी प्रतिशत जनसंख्या बौद्ध धर्म में आस्था रखने वालों की है[88]। सिंहल की स्त्रियों में बौद्ध धर्म की शिक्षाओं का प्रचार प्रसार करने का श्रेय महाथेरी संघमित्रा को ही है। संघमित्रा के ह्रदयग्राही उपदेशों का श्रवण कर रानी अनुला अन्य पांच सौ राजकुमारियों एवं राजमहिलाओं के साथ उनकी शिष्या हो गयीं एवं प्रव्रज्या ग्रहण कर ली।

सिंहल द्वीप में संघमित्रा के निवास हेतु एक विहार का निर्माण करवाया गया जिसे उपासिका विहार कहते हैं[89]। उन्होंने अपना सम्पूर्ण जीवन धर्म प्रचार में लगा दिया और 81 वर्ष की आयु में निर्वाण प्राप्त किया। वह विदेश जाने वाली प्रथम धर्म प्रचारिका थी। बौद्ध धर्म के विकास की दृष्टि से यह

अत्यंत महत्वपूर्ण घटना थी और इस दृष्टि से संघमित्रा का प्रयास सराहनीय रहा।

सम्राट अशोक की दूसरी पुत्री **चारूमती** भी संघमित्रा की ही भांति तथागत प्रवेशित धर्म में अगाध श्रद्धा रखती थी। विद्वान स्थविरों की शिक्षा, पारिवारिक परिवेश, स्वयं की इच्छा एवं निष्ठा के बल पर उसने भी बौद्ध धर्म के सिद्धांतों को भलीभांति समझ कर सिद्धता प्राप्त कर ली। युवती होने पर चारुमती का विवाह नेपाल के क्षत्रिय राजकुमार देवपाल के साथ हुआ[90]। विवाह के पश्चात् चारुमती ने अपना जीवन बौद्ध धर्म के विकास में लगाया। वह अपना अधिकांश समय भगवान बुद्ध की उपासना एवं दान धर्म में व्यतीत करती थी। 250 ईसापूर्व में चारूमती अपने पिता सम्राट अशोक के साथ नेपाल धम्मयात्रा पर गयी[91]। चारूमती पिता व पति के साथ पुण्य स्थानों का दर्शन करती, पूजा अर्चना करती एवं दीन–दुखियों को भोजन वस्त्र से तृप्त किया करती थी।

अपने पिता के वापस लौटने के पश्चात् चारूमती अपने पति के साथ नेपाल में ही रूक गयी और धम्म की निरन्तर साधना करती हुयी कालांतर में भिक्षुणी बन गयी। उसने अपने दिवंगत पति के नाम पर **देवपत्तन** नामक नगर की स्थापना की[92]। नेपाल के विश्वप्रसिद्ध **स्वयंभु चैत्य** के विषय कहा जाता है कि इसे भी रानी चारूमती ने ही निर्मित करवाया था[93]। रानी चारूमती ने नेपाला ने नवीन संघारामों एवं चैत्यों का निर्माण करवाया जिससे नेपाल में भी भलीभांति संघ की स्थापना हो सके एवं धर्मपरायण भिक्षु– भिक्षुणियों को निवास करने एवं पूजा–अर्चना का स्थान प्राप्त हो सके। उनके द्वारा निर्मित विहार चारूमति विहार कहलाया[94]। पाटन के लगभग 1300 चैत्य एवं असंख्य स्तूप तत्कालीन धर्म प्रचार–प्रसार का प्रतीक है जिसका श्रेय चारूमती को ही है। उसके विषय में भिक्षु निर्गुणानन्द लिखते हैं– ''श्रेष्ठ भिक्षुणी संघमित्रा ने सुनील सागर के बीच धर्म की ज्योति जलाई, उसी तरह उसकी बहन राजकन्या भिक्षुणी चारूमती ने उत्तर में हिमालय के वक्षस्थल शोभित नेपाल को धर्म की आभा से आलोकित कर दिया[95]।''

सातवीं शताब्दी ईस्वी के पूर्वार्द्ध में थानेश्वर के राजा हर्षवर्धन भी बौद्ध धर्म में अगाध श्रद्धा रखते थे। हर्षवर्धन की बहन **राज्यश्री** का विवाह मौखरि नरेश ग्रह वर्मा के साथ हुआ। अपने पति ग्रहवर्मा की असामयिक मृत्यु के पश्चात् राज्यश्री का हृदय सांसारिक जीवन से विरत हो गया और उसने प्रव्रज्या ग्रहण कर ली। उसके बाद उसने अपना सम्पूर्ण जीवन भिक्षुणी विहार में व्यतीत किया। ऐसा कहा जाता है कि राज्यश्री के कारण ही सम्राट हर्षवर्धन का झुकाव बौद्ध धर्म की तरफ हुआ। अप्रत्यक्ष रूप से अपने भाई को त्रिरत्न के मंगलमयी उपदेशों की अमूल्य निधि देकर, राज्यश्री ने बौद्ध धर्म के विकास में योगदान दिया[96]।

जिन दिनों भारत में सम्राट हर्षवर्धन का शासन था उन्हीं दिनों नेपाल में अंशुवर्मन् राज्य करते थे। सम्राट हर्षवर्धन एवं अंशुवर्मन की प्रगाढ़ मैत्री थी। अंशुवर्मन् की पुत्री भृकुटी बचपन से ही त्रिरत्न की वन्दना करती थी एवं तथागत के धर्म के प्रति अति श्रद्धावान थी। भृकुटी का विवाह तिब्बत नरेश **स्रोग्ड़वत्सन– खम्पो** के साथ हुआ[97]। **रानीभृकुटी** अपने साथ बुद्ध प्रतिमांए भी दहेज में ले गयी[98]। रानी भृकुटी के साथ ही बौद्ध धर्म तिब्बत गया। राजा ने रानी से प्रभावित होकर तिब्बत में एक विहार बनवाया और वहां शाक्य मुनि बुद्ध की प्रतिमा स्थापित करवायी, धर्मशील रानी भृकुटी के सुप्रयत्नों से तिब्बत की धरती पर बौद्ध धर्म का प्रचार–प्रसार सम्भव हो सका और बौद्ध धर्म तिब्बत के जन–जन तक पहुंच गया। उल्लेख मिलता है कि खम्पो की दूसरी रानी चीन की राजकुमारी **कोजो** थी। वह भी अपने साथ भगवान् बुद्ध की दिव्य प्रतिमा ले गयी। कोजो को भी बौद्ध धर्म में अगाध श्रद्धा थी। उसके परामर्श पर तिब्बत नरेश ने कठिन श्रम एवं व्यय द्वारा जलपूर्ण झील को ईंट–पत्थरों से पटवा कर बौद्ध स्थल में परिवर्तित करा दिया और वहां देव –आलय (तिब्बत की भाषा में ल्हा–सा) बन कर तैयार हो गया[99]। तिब्बत नरेश स्रोग्ड़–वत्सन–खम्पो की दोनों रानियों के कारण–तिब्बत में बौद्ध धर्म का विकास हुआ।

इस प्रकार गृहस्थ उपासिकाओं एवं भिक्षुणियों का बौद्ध धर्म के विकास में महत्वपूर्ण

योगदान रहा, जिसे नजरअन्दाज नहीं किया जा सकता।

सन्दर्भ –

1. विमलकीर्ति, थेरीगाथा, (अनुवादक एवं सम्पादक), 2006 समयक प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ0–09
2. तिक न्यात हन्ह, जहं, जहं, चरन परे गौतम के, 2001 दिल्ली, पृ0–299
3. कु0 विद्यावती ''मालविका'', आदर्श बौद्ध महिलाएं, 1983, भारतीय शाक्य परिषद, संकिसा, फर्रूखाबाद पृ0–03
4. तिक न्यात हन्ह, जहं–जह चरन परे गौतम के, पृ0–300
5. वही
6. वही, पृ0–365
7. विमलकीर्ति, थेरीगाथा, पृ0–33
8. वही, पृ0–34
9. वही, पृ0–95
10. आई0 बी0 हार्नर, विमेन अण्डर प्रिमिटिव बुद्धिज़्म, 1989, मोतीलाल बनारसदास, प्रा0लि0, नई दिल्ली, पृ0–255
11. विमलकीर्ति, थेरीगाथा, पृ0–71
12. वही, पृ0–85
13. तिक न्यात, जहं–जहं चरन परे गौतम के, पृ0–374
14. वही, पृ0–162,
    बुद्ध वीर नामे त्यत्थु, सब्ब सत्तानुमुत्तम।
    यो मं दुक्ख पमोचिसि, अ०ज०च बहुकं जनं।।''
15. विद्यावती, आदर्श बौद्ध महिलाएं, पृ0–07
16. हार्नर, विमेन अण्डर प्रिमिटिव बुद्धिज़्म
17. विमलकीर्ति, थेरीगाथा, पृ0–167
18. वही पृ0–45
19. वही
20. वही, पृ0–89
21. वही, पृ0–99
22. विद्यावती, आदर्श बौद्ध महिलाएं, पृ0–11
23. तिक न्याय हन्ह, जहं–जहं चरन परे गौतम के, पृ0–365
24. आई0बी0 हार्नर, विमेन अण्डर प्रिमिटिव बुद्धिज्म, पृ0–255
25. विमलकीर्ति, थेरीगाथा, पृ0–95
26. वही
27. तिक न्यात हन्ह, जहं जहं चरने परे गौतम के, पृ0–366
28. विमलकीर्ति, थेरीगाथा, पृ0–124
29. वही, पृ0–125
30. निर्गुणानन्द, बुद्ध विश्व विजय, 1989, मुम्बई, पृ0–31 ; विमलकीर्ति, थेरीगाथा, पृ0–127 : चिण्ण
    चिण्ण अङगाच मगधा, वज्जी, कार्सी, च कोसला।

    अनणा पण्णासबस्सानि, रट्ठपिण्डं अभु०जहं।।''
31. आई0 बी0 हार्नर, विमेन अण्डर प्रिमिटिव बुद्धिज्म, पृ0–254
32. विमलकीर्ति, थेरीगाथा, पृ0–89–90
33. वही पृ0–135–137
34. वही, पृ0–139
35. वही, पृ0–143
36. वही पृ0–81
37. मधुकर पिपलायन, बौद्ध महिलाओं के प्रेरणा प्रसंग, 2007, नई दिल्ली, पृ0–108
38. वही, पृ0–109
39. हार्नर, विमेन अण्डर प्रिमिटिव बुद्धिज्म, पृ0–254
40. मधुकर पिपलायन, बौद्ध महिलाओं के प्रेरणा प्रसंग, पृ0–11
41. बी0आर0 अम्बेडकर, भगवान बु; औश्र उनका धम्म, पृ0–374
42. मधुकर पिपलायन, बौद्ध महिलाओं के प्रेरणा प्रसंग, पृ0–114
43. विमलकीर्ति, थेरीगाथा, पृ0–101
44. मोतीचन्द, द वर्ल्ड ऑफ कोटिजान्स, पृ0–28
45. विमलकीर्ति, थेरीगाथा, पृ0–64
46. पॉल कारूस, बुद्ध गाथा, 1995, नई दिल्ली (गॉस्पेल ऑफ बुद्धा का हिन्दी रूपान्तर) पृ0–150–151
47. विमलकीर्ति, थेरीगाथा, पृ0–202
48. मधुकर पिपलायन बौद्ध महिलाओं के प्रेरणा प्रसंग, पृ0–151
49. विमलकीर्ति, थेरीगाथा, पृ0–179

50. हार्नर, विमेन अण्डर प्रिमिटिव बुद्धिज्म, पृ0–345
51. निर्गुणानन्द, बुद्ध विश्व विजय, पृ0–35
52. मधुर पिपलायन, बौद्ध महिलाओ के प्रेरणा प्रसंग, पृ0–69
53. वही पृ0–69–70
54. आई0बी0 हार्नर, विमेन अण्डर प्रिमिटिव बुद्धिज्म,पृ0–356
55. आई0 बी0 हार्नर, विमेन अण्डर प्रिमिटिव बुद्धिज्म, पृ0–356; मधुकर पिपलायन, बौद्ध महिलाओं के प्रेरेणा प्रसंग, पृ0–70
56. आई0बी0 हार्नर, विमेन अण्डर प्रिमिटिव बुद्धिज्म, पृ0–356; निर्गुणानन्द, बुद्ध विश्व विजय, पृ0–36
57. मधुर पिपलायन, बौद्ध महिलाओं के प्रेरणा प्रसंग, पृ0–70
58. तिक न्यात हन्ह, जहं–जहं चरन परे गौतम के, पृ0–345
59. वही, पृ0–346
60. मधुकर पिपलायन, बौद्ध महिलाओं के प्ररेणा प्रसंग, पृ0–71
61. तिक न्यात हन्ह, जहं–जहं चरन परे गौतम के, पृ0–346
62. वही
63. वही पृ0–346
64. वही पृ0–374
65. वही पृ0–373
66. धम्मपद टीका, पृ0–18
67. वही
68. मधुकर पिपलायन, बौद्ध–महिलाओं के प्ररेणा प्रसंग, पृ0–72
69. मधुकर पिपलायन, बौद्ध महिलाओं के प्रेरणा प्रसंग, पृ0–72
70. निर्गुणानन्द,बुद्ध विश्व विजय, पृ0–36
71. आई बी0 हार्नर,विमेन अण्डर प्रिमिटिव बुद्धिज्म, पृ0–356
72. मधुर पिपलायन, बौद्ध महिलाओं के प्रेरणा प्रसंग, पृ0–73
73. निर्गुणानन्द,बुद्ध विश्व विजय, पृ0–36
74. मधुर पिपलायन, बौद्ध महिलाओं के प्रेरणा प्रसंग, पृ0–118
75. वही पृ0–121
76. तिक न्यात हन्ह, जहं–जहं चरनप रे गौतम के, पृ0–374
77. निर्गुणानन्द,बुद्ध विश्व विजय, पृ0–36
78. विद्यावती, आदर्श बौद्ध महिलायें, पृ0–74, 75
79. वही, पृ0–58–59
80. मधुर पिपलायन, बौद्ध महिलाओं के प्रेरणा प्रसंग, पृ0–93
81. वही, पृ0– 94
82. विद्यावती, आदर्श बौद्ध महिलायें, पृ0–90
83. विद्यावती, आदर्श बौद्ध महिलायें, पृ0–91;निर्गुणानन्द,बुद्ध विश्व विजय, पृ0–36
84. जयशंकर मिश्र, प्राचीन भारत का सामाजिक इतिहास, पृ0–868
85. पी0बी0, बापट, बौद्ध धर्म के 2500 वर्ष, पृ0– 63
86. वही, पृ0–63; विद्यावती, आदर्श बौद्ध महिलायें, पृ0–95
87. निर्गुणानन्द,बुद्ध विश्व विजय, पृ0–51
88. वही, पृ0– 52
89. वही, पृ0– 51
90. वही, पृ0– 63; विद्यावती, आदर्श बौद्ध महिलायें, पृ0–101
91. निर्गुणानन्द,बुद्ध विश्व विजय, पृ0–63
92. वही,
93. वही, पृ0–64
94. वही, पृ0– 63
95. वही, पृ0–64
96. विद्यावती, आदर्श बौद्ध महिलायें, पृ0–109
97. निर्गुणानन्द,बुद्ध विश्व विजय, पृ0–63
98. विद्यावती, आदर्श बौद्ध महिलायें, पृ0–111;पी0बी0, बापट, बौद्ध धर्म के 2500 वर्ष, पृ0–52
99. विद्यावती, आदर्श बौद्ध महिलायें, पृ0–105